Cosmos Multidisciplinary Research E-Journal
Online Available at www.cmrj.in
Recognized International Peer Reviewed Journal
Impact Factor 5.69
ISSN No. 2456-1665

भक्ति आंदोलन और संत साहित्य का समाज पर प्रभाव

प्रा.डॉ.शेख शरफोद्दीन फक्रोद्दीन
हिंदी विभागाध्यक्ष सहयोगी प्रोफेसर
कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय बदनापूर,
जि. जालना (महाराष्ट्र)
मो. न. 8669169236

सारांश

भक्ति आंदोलन भारतीय इतिहास का एक व्यापक सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आंदोलन था, जिसने मध्यकालीन भारत में व्याप्त जाति-भेद, कर्मकांड, धार्मिक रूढ़ियों तथा सामाजिक असमानताओं को चुनौती दी। इस आंदोलन के संतों जैसे कबीर, रैदास, गुरु नानक, मीराबाई, सूरदास, तुलसीदास, नामदेव, तुकाराम, ज्ञानेश्वर आदि ने लोकभाषाओं में साहित्य की रचना कर समाज के सभी वर्गों तक आध्यात्मिक एवं मानवीय मूल्यों का संदेश पहुँचाया। संत साहित्य ने समानता, मानवता, प्रेम, सहिष्णुता और सामाजिक समरसता को स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस शोध-पत्र में भक्ति आंदोलन एवं संत साहित्य के सामाजिक प्रभावों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया ।

कीवर्ड: भक्ति आंदोलन, संत साहित्य, सामाजिक समरसता, कबीर, तुलसीदास, मीरा, गुरु नानक, सामाजिक सुधार, लोकभाषा, भारतीय संस्कृति।

प्रस्तावना :

भारतीय समाज सदैव विविधताओं से परिपूर्ण रहा है। मध्यकाल में समाज जातिगत भेदभाव, धार्मिक कट्टरता, कर्मकांड तथा सामाजिक विषमताओं से ग्रस्त था। ऐसे समय में भक्ति आंदोलन ने आध्यात्मिक चेतना के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया। इस आंदोलन ने ईश्वर की भक्ति को सभी मनुष्यों का समान अधिकार माना तथा मानव-मानव के बीच प्रेम, समानता और बंधुत्व की भावना विकसित की। संत साहित्य ने इन विचारों को सरल लोकभाषाओं के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। भक्ति आंदोलन ने हिंदी साहित्य को जटिल शास्त्रीय बंधनों से मुक्त कर सीधे आम आदमी के हृदय से जोड़ दिया। इसके प्रमुख कारण निम्नलिखित थे:

लोकभाषा का प्रयोग: भक्ति संतों ने संस्कृत जैसी कठिन 'विद्वानों की भाषा' को छोड़कर जनसामान्य की बोलियों जैसे अवधी, ब्रजभाषा और सधुक्कड़ी को अपनाया। जैसे:तुलसीदास ने

आम आदमी की भाषा अवधी में 'रामचरितमानस' लिखकर घर-घर तक पहुँचाया। Please upvote and follow me.

सूरदास ने ब्रजभाषा के माध्यम से कृष्ण की बाल-लीलाओं को लोक जीवन का हिस्सा बनाया। सामाजिक समावेशिता: यह आंदोलन केवल उच्च वर्ग तक सीमित नहीं था। इसमें कबीर, रैदास और नामदेव जैसे संतों ने भाग लिया जो समाज के निम्न और वंचित वर्गों से आते थे, जिससे आम जनता को इसमें अपनी छवि दिखाई दी।

कुरीतियों का विरोध: संतों ने जाति-पाति, छुआछूत और ब्राह्मणवादी कर्मकांडों को चुनौती दी, जिससे साधारण जनमानस के लिए ईश्वर की भक्ति सुलभ हो गई।

भावनात्मक जुड़ाव: भक्ति साहित्य ने ज्ञान के कठिन मार्ग के बजाय 'प्रेम' और 'भाव' को प्राथमिकता दी। कबीर के दोहे, मीरा के पद और चैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन ने लोगों को एक सामूहिक और उत्सवपूर्ण धार्मिक अनुभव प्रदान किया।

लोक-जागरण: हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे विद्वानों के अनुसार, यह काव्य "जनता के हृदय की वाणी" था, जिसने मुगल काल की निराशा के बीच लोगों में आत्म-गौरव और नव-स्फूर्ति का संचार किया।

भक्ति आंदोलन भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आंदोलन था, जिसका उद्देश्य ईश्वर के प्रति प्रेम, भक्ति और समर्पण की भावना का प्रचार करना तथा समाज में व्याप्त जाति-पाँति, ऊँच-नीच, धार्मिक आडंबर, कर्मकांड और सामाजिक भेदभाव का विरोध करना था। यह आंदोलन मुख्यतः 7वीं से 17वीं शताब्दी के बीच भारत के विभिन्न क्षेत्रों में विकसित हुआ। दक्षिण भारत के आलवार और नयनार संतों से प्रारंभ होकर यह महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, पंजाब तथा उत्तर भारत तक फैल गया।

भक्ति आंदोलन का मूल सिद्धांत था कि ईश्वर तक पहुँचने के लिए किसी जाति, वर्ग, लिंग या विशेष कर्मकांड की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति सच्ची श्रद्धा, प्रेम और भक्ति के माध्यम से ईश्वर की प्राप्ति कर सकता है। इस आंदोलन ने धर्म को आम जनता के जीवन से जोड़ा और लोकभाषाओं में धार्मिक एवं आध्यात्मिक संदेश देकर समाज के सभी वर्गों को प्रभावित किया।

भक्ति आंदोलन के संतों ने समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों का विरोध किया। कबीर ने जाति-भेद, पाखंड और धार्मिक कट्टरता का विरोध करते हुए मानवता का संदेश दिया। गुरु नानक ने एकेश्वरवाद, समानता और सेवा पर बल दिया। रैदास ने सामाजिक समता और श्रम की गरिमा का समर्थन किया। मीराबाई ने प्रेम और समर्पण की भक्ति का आदर्श प्रस्तुत

किया। तुलसीदास ने रामचरितमानस के माध्यम से आदर्श जीवन-मूल्यों का प्रचार किया, जबकि सूरदास ने कृष्ण-भक्ति और मानवीय संवेदनाओं को अपने काव्य में अभिव्यक्त किया।

भक्ति आंदोलन की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इसने संस्कृत के स्थान पर लोकभाषाओं–जैसे अवधी, ब्रज, हिंदी, पंजाबी, मराठी, गुजराती, बंगाली, तमिल आदि–को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। इससे साहित्य आम जनता तक पहुँचा और भारतीय भाषाओं का विकास हुआ।भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक और साहित्यिक इतिहास के मध्यकाल की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता को भक्ति आन्दोलन के रूप में पहचाना जा सकता है। साहित्य के क्षेत्र में यह **भक्ति काव्य** के विराट रस स्रोत के रूप में प्रकट हुआ। भक्ति काल में अधिक कार्य किया गया

भक्ति काव्य का स्वरूप अखिल भारतीय था। दक्षिण भारत में दार्शनिक सिद्धांतों के ठोस आधार से समृद्ध होकर भक्ति उत्तर भारत में एक आंदोलन के रूप में फैल गयी। इसका प्रभाव कला, लोक व्यवहार आदि जीवन के समस्त क्षेत्रों पर पड़ा। कबीर, जायसी, मीरा, सूर, तुलसीदास आदि कवियों के साथ रामानन्द, चैतन्य महाप्रभु, वल्लभाचार्य आदि आचार्यों के सिद्धांतों में भक्ति के इसी स्वरूप के दर्शन होते हैं।

भक्ति आंदोलन की प्रमुख विशेषताएँ

1. ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति पर बल।
2. जाति-पाँति और छुआछूत का विरोध।
3. धार्मिक आडंबर एवं कर्मकांड का विरोध।
4. मानवता, प्रेम, समानता और भाईचारे का संदेश।
5. लोकभाषाओं में साहित्य की रचना।
6. गुरु की महत्ता का प्रतिपादन।
7. नैतिक एवं आध्यात्मिक जीवन पर बल।
8. सभी धर्मों के प्रति सहिष्णुता।

● भक्ति आंदोलन का सामाजिक प्रभाव

1. सामाजिक समानता और समरसता की भावना का विकास हुआ।
2. जातिगत भेदभाव को चुनौती मिली।
3. धार्मिक सहिष्णुता और सांप्रदायिक सद्भाव को बढ़ावा मिला।
4. स्त्रियों और निम्न वर्गों को आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का अवसर मिला।
5. हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं औरसाहित्य का व्यापक विकास हुआ।

6. समाज में नैतिकता, प्रेम, सेवा और करुणा जैसे मानवीय मूल्यों का प्रसार हुआ।

स्वामी माधवाचार्य (संवत् 1254-1333) ने 'ब्राह्म सम्प्रदाय' नाम से द्वैतवादी वैष्णव सम्प्रदाय चलाया जिसकी ओर लोगों का झुकाव हुआ। इसके साथ ही द्वैताद्वैतवाद (सनकादि सम्प्रदाय) के संस्थापक निम्बार्काचार्य ने विष्णु के दूसरे अवतार कृष्ण की प्रतिष्ठा विष्णु के स्थान पर की तथा लक्ष्मी के स्थान पर राधा को रख कर देश के पूर्व भाग में प्रचलित कृष्ण-राधा (जयदेव, विद्यापति) की प्रेम कथाओं को नवीन रूप एवं उत्साह प्रदान किया। वल्लभाचार्य जी ने भी कृष्ण भक्ति के प्रसार का कार्य किया। जगत्प्रसिद्ध सूरदास भी इस सम्प्रदाय की प्रसिद्धि के मुख्य कारण कहे जा सकते हैं। सूरदास ने वल्लभाचार्य जी से दीक्षा लेकर कृष्ण की प्रेमलीलाओं एवं बाल क्रीड़ाओं को भक्ति के रंग में रंग कर प्रस्तुत किया। माधुर्यभाव की इन लीलाओं ने जनता को बहुत रसमग्न किया।

इस तरह दो मुख्य सम्प्रदाय सगुण भक्ति के अन्तर्गत अपने पूरे उत्कर्ष पर इस काल में विद्यमान थे - रामभक्ति शाखा; कृष्णभक्ति शाखा। इसके अतिरिक्त भी दो शाखाएँ प्रचलित हुईं - प्रेममार्ग (सूफ़ी) तथा निर्गुणमार्ग शाखा।

सगुण धारा के इस विकास क्रम के समानांतर ही बाहर से आए हुए मुसलमान सूफ़ी संत भी अपने विचारों को सामान्य जनता में फैला रहे थे। मुसलमानों के इस लम्बे प्रवास के कारण भारतीय तथा मुस्लिम संस्कृति का आदान-प्रदान होना स्वाभाविक था। फिर इन सूफ़ी संतों ने भी अपने विचारों को जनसाधारण में व्याप्त करने की, अपने मतों को भारतीय आख्यानों में, भारतीय परिवेश में, यहीं की भाषा-शैली लेकर प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया। इनके मतों में कट्टरता का कहीं भी आभास नहीं था। इनका मुख्य सिद्धान्त प्रेम तत्त्व था। यद्यपि प्रेम के माध्यम से ईश्वर को पाने के लिए किए जाने वाले प्रयास (विधि) में कुछ अन्तर अवश्य था तथापि इनके प्रेम तत्त्व के प्रतिपादन एवं प्रसार शैली ने लोगों को आकर्षित किया। इन्होंने एकेश्वरवाद का प्रतिपादन भी किया जिसे कुछ लोगों ने अद्वैतवाद ही मान लिया, जो कि उचित नहीं है। हज़रत निज़ामुद्दीन चिश्ती, सलीम चिश्ती आदि अनेक संतों ने हिन्दू-मुसलमान सबका आदर प्राप्त किया। इस सूफ़ी मत में भी चार धाराएँ मुख्यत: चलीं-

(१) चिश्ती सम्प्रदाय

(२) कादरी सम्प्रदाय

(३) सुहरावर्दी सम्प्रदाय

(४) नक्शबंदिया सम्प्रदाय।

जायसी, कुतुबन, मंझन आदि प्रसिद्ध (साहित्यकार) कवियों ने हिन्दी साहित्य को अमूल्य साहित्य रत्न भेंट किए। निर्गुणज्ञानाश्रयी शाखा पर भी इनका प्रभाव पड़ा तथा हिन्दू-मुसलमानों के भेद को मिटाने की बातें कही जाने लगीं। आचार्य शुक्ल ने भी इन्हें 'हिन्दू और मुसलमान हृदय को आमने सामने करके अजनबीपन मिटाने वाला' कहा।

रामानन्द जी उत्तर भारत में रामभक्ति को लेकर आए थे। उनके सिद्धान्तों में इस भक्ति का स्वरूप दो प्रकार का था - राम का निर्गुण रूप; राम का अवतारी रूप। ये दोनों मत एक साथ ही थे। निर्गुण रूप में राम का नाम तो होता पर उसे 'दशरथ-सुत' की कथा से सम्बद्ध नहीं किया जाता। रामानन्द ने देखा कि भगवान की शरण में आने के उपरान्त छूआ-छूत, जाँत-पाँत आदि का कोई बन्धन नहीं रह जाता अत: संस्कृत के पण्डित और उच्च ब्राह्मण कुलोद्भूत होने के पश्चात भी उन्होंने देश-भाषा में कविता लिखी और सबको (ब्राह्मण से लेकर निम्नजाति वालों तक को) राम-नाम का उपदेश दिया। कबीर इन्हीं के शिष्य थे। कबीर, रैदास, धन्ना, सेना, पीपा आदि इनके शिष्यों ने इस मत को प्रसिद्ध किया। रामनाम के मंत्र को लेकर चलने वाले अक्खड़-फक्कड़ संतों ने भेद-भाव भुला कर सबको प्रेमपूर्वक गले लगाने की बात कही। वैदिक कर्मकाण्ड के द्वारा फैले हुए आडंबरों एवं बाह्य विधि-विधानों के त्याग पर बल देते हुए राम नाम का प्रेम, श्रद्धा से स्मरण करने की सरल पद्धति और सहज समाधि का प्रसार किया। कबीर में तीन प्रमुख धाराएँ समाहित दिखाई देती हैं -

(१) उत्तरपूर्व के नाथपंथ और सहजयान का मिश्रित रूप

(२) पश्चिम का सूफ़ी मतवाद और

(३) दक्षिण का वेदान्तभावित वैष्णवधर्म

भक्तिकाल हिंदी साहित्य का एक महान सांस्कृतिक और साहित्यिक आंदोलन था, जिसने जनमानस में श्रद्धा, भक्ति, विश्वास, साहस, प्रेम तथा देशप्रेम की भावना जागृत की। इस युग में मुख्यतः भक्तिपरक साहित्य की रचना हुई, किंतु इसके साथ-साथ नीति, राजप्रशस्ति और अन्य विषयों पर भी साहित्य सृजित हुआ। अकबर के शासनकाल में साहित्य को संरक्षण मिला तथा रहीम, बीरबल और कृपाराम जैसे कवियों ने विविध प्रकार की रचनाएँ कीं।

आचार्य केशवदास का रचनाकाल भक्तिकाल में होने पर भी उनकी काव्य-दृष्टि और आचार्यत्व रीतिकाल की विशेषताओं से जुड़ा होने के कारण उन्हें रीतिकाल का प्रमुख कवि

माना जाता है। भक्तिकाल में साहित्य के साथ-साथ ललित कलाओं–मूर्तिकला, चित्रकला, वास्तुकला और संगीत–का भी उल्लेखनीय विकास हुआ। भारतीय और ईरानी शैलियों के समन्वय से कला और स्थापत्य में नई विशेषताएँ विकसित हुईं। कृष्ण-भक्ति, पद-गायन, राग-रागिनियों तथा संगीत परंपरा को भी इस युग में विशेष उन्नति मिली।

निष्कर्षतः

भक्तिकाल भारतीय साहित्य, संस्कृति और इतिहास का स्वर्णिम युग था। इसने भक्ति, नैतिकता, मानवता और सात्विक जीवन के आदर्शों को स्थापित किया। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, भक्ति साहित्य भारतीय इतिहास की एक अद्वितीय और अनुपम साहित्यिक धारा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. शुक्ला, रामचन्द्र (2000)। भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य (भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य)। वाणी प्रकाशन.
2. त्रिपाठी, आर.एस. (2012)। हिंदी साहित्य का इतिहास (हिंदी साहित्य का इतिहास)। साहित्य अकादमी.
3. मिश्रा, आर.के. (2014)। भक्ति आंदोलन का हिंदी साहित्य पर प्रभाव (भक्ति आंदोलन का हिंदी साहित्य पर प्रभाव)। लोकभारती प्रकाशन.
4. द्विवेदी, आर.के. (2011). हिंदी भक्ति साहित्य: सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ (हिंदी भक्ति साहित्य: सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ)। राधाकृष्ण प्रकाशन.
5. शर्मा, शशि (2009)। भक्ति आंदोलन और हिंदी कविता (भक्ति आंदोलन और हिंदी कविता)। राजकमल प्रकाशन.
6. श्रीवास्तव, शालिनी (2008)। भक्ति आंदोलन के सामाजिक प्रभाव (भक्ति आंदोलन का सामाजिक प्रभाव)। नेशनल पब्लिशिंग हाउस।